Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
January-June 2023 4(1), 1331–1335

DEPICTION OF HERO-HEROINE AND NATURE IN RAJASTHANI PAINTING

राजस्थानी चित्रकला में नायक-नायिका व प्रकृति अंकन

Shalini Dhama [1]

[1] Assistant Professor, Department of Lalit Kala, Ch. Charan Singh University, Merrut, Uttar Pradesh, India

Corresponding Author
Shalini Dhama,
shalini197615@gmail.com

DOI
10.29121/shodhkosh.v4.i1.2023.3474

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2023 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

ABSTRACT

English: Early Rajasthani paintings are available in the 16th century. The main themes of these paintings are Krishna-leela, Nayika-bhed and Ragamala. Rajasthani painters have taken paintings based on the world of imagination rather than the visual world. In this era, the development of regional styles begins in which the styles of Mewar, Nathdwara, Bundi, Kishangarh, Bikaner, Jodhpur, Jaipur etc. are prominent. Each branch has some local specialty of its own due to which their paintings are recognized as different from the paintings of other styles.

Hindi: प्रारम्भिक राजस्थानी चित्र 16वीं शती में उपलब्ध हैं। इन चित्रों का मुख्य विषय कृष्ण-लीला, नायिका-भेद तथा रागमाला है। राजस्थानी चित्रकारों ने दृश्य-जगत् की अपेक्षा कल्पना-जगत् से आधारित चित्र ही लिये हैं। इसी युग में क्षेत्रीय शैलियों का विकास प्रारम्भ होता है जिसमें मेवाड़, नाथद्वारा, बूँदी, किशनगढ़, बीकानेर, जोधपुर, जयपुर आदि शैलियाँ प्रमुख हैं। प्रत्येक शाखा में अपनी कुछ न कुछ स्थानीय विशेषता अवश्य रही जिससे उनके चित्रों को अन्य शैलियों के चित्रों से भिन्न रूप में पहचाना जाता है।

1. प्रस्तावना

प्रारम्भिक राजस्थानी चित्र 16वीं शती में उपलब्ध हैं। इन चित्रों का मुख्य विषय कृष्ण-लीला, नायिका-भेद तथा रागमाला है। राजस्थानी चित्रकारों ने दृश्य-जगत् की अपेक्षा कल्पना-जगत् से आधारित चित्र ही लिये हैं। इसी युग में क्षेत्रीय शैलियों का विकास प्रारम्भ होता है जिसमें मेवाड़, नाथद्वारा, बूँदी, किशनगढ़, बीकानेर, जोधपुर, जयपुर आदि शैलियाँ प्रमुख हैं। प्रत्येक शाखा में अपनी कुछ न कुछ स्थानीय विशेषता अवश्य रही जिससे उनके चित्रों को अन्य शैलियों के चित्रों से भिन्न रूप में पहचाना जाता है।

प्रकृति और मानव का सदैव से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। मानव की यह स्वाभाविक वृत्ति है कि वह वाह्य वस्तु जगत को अपनी कल्पना के द्वारा अपनी आकांक्षाओं के अनुरूप चित्रित करता है। मानव आदि काल से ही प्रकृति के साथ तारतम्य स्थापित करता आया है, क्योंकि इस प्रकार उसकी भावनाओं का उन्नयन और परिष्कार होता है। हृदय में मानव की चेतना प्रकृति स्वभावतः सौन्दर्योनमुखी है। सौन्दर्य के प्रति वह अपना मोह प्रदर्शित नहीं करेगा, यह असम्भव है। प्रकृति के सम्पर्क में रहकर मनुष्य जिन हर्षोल्लासों और सुखः दुखों का अनुभव करता है वह ऋतु परिवर्तन पर आधारित है। विभिन्न

ऋतुओं में होने वाले जलवायु और प्राकृतिक वातावरण में प्रभाव के फलस्वरूप समयानुसार सुख-दुख के आवेगों की व्यंजना कला और साहित्य में खूब हुई है।

सर्वत्र बिखरा प्राकृतिक वैभव मानव हृदयों में अलग ही भावनाओं को जगा देता है। प्रकृति उसकी जीवन संगिनी है। वह सोचता है कि प्रकृति उसकी भावनाओं को, उसकी आवश्यकताओं को पूरा करती है, उसके मन की बात को समझती है। मनुष्यों के प्रकृति के सुखद और मानव जीवन के अस्तित्व में बाधा न पहुँचाने वाले स्वरूप के साथ ही उसके संहारकारी भयवाह एवं रौद्र रूप का भी परिचय मिला। प्रकृति के उपयोग एवं विश्लेषणात्मक रूप पर विचार करने वाला मानव वैज्ञानिक बना और सौन्दर्य पर सुध-बुध खोने वाला, मानव बना भावुक कलाकार-कविचितेरा।

मेवाड़ः-

मेवाड़ की कला को राणा राजसिंह (1652-1680 ई०) ने पोषित किया तथा इस समय संस्कृत एवं हिन्दी की अनेक भक्ति एवं रीति कविताओं पर आाधारित चित्रों का समावेश हुआ। इन चित्रों में ‘नायिका भेद’ को प्रमुखता दी गयी जिसमें नायक-नायिका के रूप में आदर्श प्रेमी राधा एवं कृष्ण को चित्रित किया गया है। महाकवि केशवदास की ‘रसिक प्रिया’ मेवाड़ के चितेरों की प्ररणास्त्रोत बनी तथा इस ग्रन्थ को कई बार पूर्णरूप से चित्रित किया गया। इसके आधार पर नायक-नायिका भेद सम्बन्धी अनेक स्फुट चित्र भी बनाये गये। इसके अतिरिक्त ‘गीत-गोविन्द’, सूरसागर, सुकरक्षेत्र माहात्मय तथा भ्रमरगीत आदि ग्रन्थों का भी चित्रण इस समय की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। ‘ढोलामारू’, ‘बारहमासा’ आदि भी मेवाड़ शैली के प्रमुख विषय रहे हैं।

प्रारम्भिक मेवाड़ी चित्रों में पश्चिमी एवं मध्यदेशीय शैली का प्रभाव अधिक दिखायी पड़ता है। सत्रहवीं शताब्दी तक मेवाड़ शैली में सर्वथा नवीन प्रारूप के साथ स्वतंत्र चित्रण प्रारम्भ होता है और इस प्रकार उसकी अपनी अलग विशिष्टता नजर आने लगती है। जो कालान्तर में विकसित होती गयी। मेवाड़ की लोक कला के मिश्रण से रंगों में चमकीलापन प्रकृति की अलंकारिक रूप सृजना तथा मोटी रेखाओं द्वारा सामने आया। मेवाड़ शैली के चित्रों में चमकीले पीले रंग और लाख के लाल रंग, जोगिया, नीला तथा हरे रंगों की प्रधानता देखी जाती है। चित्रों की पृष्ठभूमि को एक रंग या विपरीत रंगों के कई टुकड़ों में दिखाया गया है।

आम्र और कदली वृक्षों का अंकन इस शैली की स्थानीय परम्परा रही है। पशु-पक्षियों को विशेष स्नेह के साथ चित्रित किया गया है। पक्षियों में मयूर, हंस, चकोर और पशुओं में हाथी, घोड़ा, कुत्ता, हिरण तथा सिंह आदि का विशेष रूप से चित्रण हुआ है। जो प्रारम्भ में तो अलंकारिक है लेकिन मुगल प्रभाव से बाद में पर्याप्त यथार्थ चित्र चित्रित हुए हैं। रात्रिकालीन पृष्ठभूमि को गहरे रंग में दिखाया गया है तथा उसमें चाँद-सितारों का अंकन भव्य रूप में हुआ है। मेवाड़ शैली के चित्रों में मानव-आकृतियों तथा उनकी भाव-भंगिमाओं एवं विभिन्न मुद्राओं के चित्रण बहुत ही सुन्दर ढ़ंग से किये गये हैं। नारी आकृति आकर्षक, चेहरे गोल, मीनाकृति आँखें, लम्बी नाक, भरे हुए चिबुक तथा अपेक्षाकृत छोटा कद मेवाड़ शैली की अपनी निजी विशेषता है। मेवाड़ शैली के बहुत से चित्रों को देखने से यह पता चलता है कि यहाँ के कलाकारों की तत्कालीन रीति-रिवाज, वेष-भूषा तथा ग्रामीण जीवन में विशेष रूचि रही है। मेवाड़ शैली में अलंकारिता तथा चित्र संयोजन दो ऐसी विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं जिनसे यह चित्र शैली अन्य शैलियों से विशिष्ट रूप से अलग दिखायी पड़ती है।

नाथद्वाराः-

राजा राणा कुम्भा के समय मेवाड़ शुद्ध भारतीय संस्कृति का केन्द्र था जहाँ चित्रकला ने अपने नये रूप को ग्रहण किया। जिसमें भक्ति भावना और धार्मिक भावना ने मिलकर एक नया रूप कला को दिया जो नाथद्वारा में दिखाई देता है। नाथद्वारा शैली की सबसे बड़ी देन पिछवाई चित्रण है। नाथद्वारा शैली में कृष्ण-चरित्र की बहुलता दिखायी पड़ती है। माता

यशोदा, नन्द, ग्वाल-बाल, गोपियों के बीच कृष्ण एवं राधा का मनमोहक चित्रण हुआ है। रासलीला यहाँ का बहुचर्चित विषय है। श्री नाथ जी के प्राकट्य एवं लीलाओं के साथ आष्टायाम की सेवा-पूजा के असंख्य चित्र बनाये गये। विभिन्न उत्सवों पर मंदिर की दीवारों पर बनाये जाने वाले चित्रों में विषयगत भिन्नता दृष्टिगत होती है।

इस चित्र-शैली में लोककला की सरलता एवं गतिशीलता के कारण नाथद्वार चित्र नित नूतन नये आयामों में व्यक्त हुए हैं और अपनी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए आज तक लोगों को आकर्षित करते आ रहे हैं। प्राकृतिक दृश्यों का सुन्दर चित्रण भी नाथद्वारा शैली की अपनी निजी उपलब्धि है जिसने इस चित्रों में विशेष आकर्षण बनाये रखा। मारवाड़ के चित्रों में अन्य वृक्षों की अपेक्षा आम के वृक्ष अधिक दर्शाये गये हैं। पशु-पक्षियों में ऊँट, घोड़ा तथा कुत्ता, बादलों को घने काले गोलाकार रूप में चित्रित किया गया है। विद्युत रेखाओं को प्रायः समाकर रूप में दर्शाया है। इस प्रकार मारवाड़ चित्र परम्परा का अपना अलग अस्तित्व है।

किशनगढ़:-

किशनगढ़ की चित्रकला शैली के संस्थापक राजा नागरीदास ही थे। कवि नागरीदास की प्रेयसी जिसे बणीठणी के रूप में जाना जाता है और बाद में इसी बणीठणी ने राधा का रूप ग्रहण किया तथा चित्रकारों ने इसके रूप-माधुर्य को नारी आकृति के रूप में चित्रित किया। नागरीदास ने किशनगढ़ में चित्रशाला स्थापित की तथा स्वंय मौलिक अंकन कर अन्य कलाकारों को दिशा निर्देश दिया। उन्होंने साहित्य के क्षेत्र में एक अनूठी धारा प्रवाहित की जिनमें कृष्ण और राधा के प्रेम प्रसंगों को उनकी लीलाओं को प्रेममुग्ध होकर अपनी रचनाओं का विषय बनाया। कवि नागरीदास बणीठणी नयनों के प्रति इतने आसक्त थे कि उन्होंने अभूतपूर्व काव्य की रचना कर डाली, इस ग्रन्थ का नाम “रचनाइश्कचमन” है जिसमें ऐसे नेत्रों का वर्णन कवि ने किया है उनके शब्दों में-

“सुरख चरम महबूब ने खंजन दिये संवार,

निकले लोहू बस रंगे मासिक पेजर पार।

नौकविहार नागरीदास का प्रिय विषय रहा है। रूप नगर और किशनगढ़ में फूल महल ऐसी झील है जो नौका विहार हेतु उपयोगी रही है। सबसे ज्यादा नायिका-भेद के चित्रों को लोकप्रियता प्राप्त हुई किशनगढ़ के चित्रकारों ने कृष्णलीला के चित्र बनाये हैं जो हिन्दी की रचनाओं पर आधारित हैं। इन चित्रों में भावों की तीव्र अभिव्यक्ति के साथ ही साथ लालित्य, मधुरता एवं सजीवता आदि भी दृष्टिगत होते हैं। किशनगढ़ शैली के चित्रों की अपनी कुछ महत्वपूर्ण विशिष्टताएं हैं। जिनके कारण इसे ‘राजस्थान’ की विविध उपशैलियों में से तुरन्त अलग किया जा सकता है। रेखाओं का लावण तथा रंगों का चमत्कार साहित्य के ऐसे रूपक लिपिबद्ध करता है जिसमें कविता और कला दोनों का आनन्द मिल जाता है। भक्ति भाव से परिपूर्ण इस शैली के चित्रों में राधा-कृष्ण के अंकन में सर्वथा नवीन प्रयोग किया गया है।

किशनगढ़ के चित्रों की पुरूषाकृति में लम्बा छरहरा शरीर, समुन्नत ललाट, दीर्घ तथा ऊँची उठी हुई नासिका, पतले अधर, दीर्घ नेत्र तथा कर्णानत तक खिंची हुई भृकुटियों का विशेष अंकन हुआ है सम्पूर्ण मुख-मण्डल में काजल की कालीमा से अधिक स्पष्ट विशाल मादक नेत्र इतने प्रमुख रहते हैं कि दृष्टि सर्वाथम वहीं पहुँचती है। नारी आकृति में नारी-सुलभ लावण्य एवं सुकुमारता सर्वत्र दृष्टिगत होती है। किशनगढ़ शैली के चित्रों में पहाड़ों, झीलों, उपवनों तथा पेड़-पौधों की बहुलता है, दूर-दूर तक फैली हुई झील, उसमें तैरती हुई नौकाएं इन झीलों में हंस, बत्तख, सारस, आदि को भी दिखाया गया है। चांदनी रात में केलि-क्रीड़ा, संध्याकालीन एवं प्रातः कालीन बादलों के पल-पल बदलते रूप एवं उनकी क्रीड़ाओं का भी बहुत ही मनोहारी चित्रण इस शैली में प्राप्त होता है।

बीकानेर:-

बीकानेर चित्रश्शैली के चित्रों में कोमल रंग-योजना दिखायी पड़ती है। लाल बैंगनी, जामुनी सलेटी, बादामी आदि रंगों का प्रयोग करके यहाँ के कलाकारों ने चित्रों में एक प्रकार का सुफियाना भाव ले आने की प्रबल चेष्टा की है। कोमलता, रहस्यात्मकता इन चित्रों की विशिष्टता है। नारी अंकन में यहाँ के कलाकारों को महारत हासिल थी। इन आकृतियों में एक प्रकार की कोमलता है जो अन्यत्र नहीं दिखायी पड़ती। इस शैली के चित्रकारों ने प्रकृति के प्रभाव का पूर्ण अंकन किया है। चित्र के हरे पृष्ठभूमि में फूलों से लदी झाड़ियाँ, लताकुंज, पेड़-पौधों का अंकन मनोरम है। आकाश में घुमड़ते हुए मेघ, उसमें चमकती बिजली तथा प्रकृति के अन्य रूपों को समुचित वर्णों द्वारा चित्रकार ने खूब सजाया-सँवारा है। अग्रभूमि में बाग-बगीचे तथा कमल सरोवर का चित्रण प्राप्त होता है। बालू के टीलों का अंकन चीनी प्रभाव लिये हुए हैं। बीकानेर चित्र शैली में पशु-पक्षियों के चित्रण भी उत्कृष्टता लिये हुए है। भेड़, बकरी, ऊँट, कुत्ते, हिरन, सारस के साथ हाथी, घोड़े तथा शिकार के हिंसक पशुओं का चित्रण प्रभावशाली है।

बीकानेर के चित्रों में यद्यपि मालवा, मेवाड़, बूँदी तथा किशनगढ़ के समान ओज नहीं है फिर भी अपनी शैलीगत विशिष्टता के कारण आकर्षक है। इन चित्रों में परिष्कृत राजसी रूचि का सर्वत्र दिग्दर्शन होता है।

बूँदी:-

राजस्थानी चित्र शैलियों में बूँदी की अपनी अलग विशेषता है, प्राकृतिक लेकिन नायिकाओं की चिकनी लालित्यपूर्ण त्वचा उन पर सुन्दर केश राशि जो नायिका को लावण्य प्रदान करती है, यह रेखात्मक सौन्दर्य ही है कि कलाकारों की तूलिका इतनी बारीक और कोमल रेखाओं को व्यक्त करने में परिपक्व थी। नारी आकृति लम्बी तथा छरहरी बनायी गयी है जिनके कंचुकी से कसे हुए उभरे वक्ष तथा कटि क्षीण है। पुरूष आकृतियाँ हृष्ट-पुष्ट तथा वीरता के भाव से युक्त बनायी गयी है। इन चित्रों में प्रकृति को उद्दीपन रूप में प्रस्तुत किया गया है। जल की चंचल लहरों को प्रायः गहरी पृष्ठभूमि पर हल्के सफेद रंग को दर्शाया गया है। आकाश में बादलों को लाल तथा सुनहरे रंगों से दिखाया गया है। आकाश का रंग प्रतिपल परिवर्तित होता रहता है इसीलिए बूँदी कलाकारों ने उसे समयानुसार अंकन के लिए विविध रंगों से चित्रित किया है। सुकोमल छाया का प्रयोग बूँदी षैली की अपनी विशिष्टता है। बूँदी शैली के चित्रों में हाथी का चित्रांकन बहुत ही यथार्थ, सशक्त एवं सजीव हुआ है। अन्य पशुओं के चित्रों में भी पर्याप्त सुन्दरता है।

जयपुरः-

ढूढाह क्षेत्र के अन्तर्गत विकसित आमेर तथा जयपुर चित्र-शैली कछवाहा राजवंशजों के संरक्षण में पुष्पित एवं पल्लवित हुई। यही कारण है कि कुछ कला-समीक्षकों ने इस शैली को कछवाहा कलम के नाम से भी अभिहित किया है।

जयपुर चित्रश्शैली में व्यक्ति चित्र का विशेष महत्व है। राजपूती शान एवं वैष्णव धर्म से सम्बन्धित चित्रों का बोलबाला हुआ। शिकार, दरबार एवं सामन्ती वैभव-विलास के कारण पुष्टमार्गीय भक्ति से सम्बन्धित चित्रों को प्रमुखता प्राप्त हुई। रीतिकालीन साहित्य के आधार पर नायिका भेद, राग-रागिनी, बारहमासा तथा श्रंगारिक विषयों पर भी चित्र बनाये गये। सामंती वैभव के अनुरूप जलक्रीड़ा, उद्यान-क्रीड़ा, वन-विहार आदि अनेक श्रंगारपरक चित्र बनाये गये।

यहाँ की चित्र शैली में जिस प्रकार समय-समय पर बदलाव आया है उसी प्रकार यहाँ के चित्रों की आकृतियों के वस्त्राभूषण में भी परिवर्तन आया है। पुरूषों की पगड़ी का अंकन भी बदलता रहा है। नारी आकृतियों को हर समय आभूषणों से युक्त दिखाया गया है।

अधिकांष चित्रों में एकचष्म चेहरे बनाये गये हैं किन्तु कहीं-कहीं डेढ़चष्म भी दिखायी पड़ते हैं। इस षैली के चित्रों में नेत्र किंचित वक्र हैं किन्तु कटाक्ष रेखा भूचाप तक नहीं बनायी गयी है। नेत्र अधिकतर मत्स्याकार अथवा मुड़े हुए कमल के दल के समान हैं। आकृतियों की भावभंगिमाएँ एवं मुद्राएँ सुन्दर तथा भावपूर्ण हैं। यहाँ के चित्रों में हांसिये गहरे लाल रंग से बनाये गये हैं। लाल, नीला, पीला, सफेद रंगों के साथ हरे रंग को प्रधानता दी गयी है। रंग चटकीले हैं और स्वर्ण एवं रज रंगों का प्रयोग यथास्थान दिखायी पड़ता है। लता वृक्ष-पुष्प-पौधों एवं समस्त प्राकृतिक परिवेष आलंकारिक तथा राजस्थानी प्रभाव लिए हुए हैं। पषु-पक्षियों का यथार्थ अंकन किया गया है और उन्हें बड़े सहज एवं सुन्दरता से निरूपित किया गया है।

CONFLICT OF INTERESTS

None.

ACKNOWLEDGMENTS

None.

REFERENCES

Dr. Kiran Kumari Gupta- Natural depiction in Hindi poetry, page 15.
Dr. Chintamani, Lokayan, page 40.
Vijay Detha- Literature and Society, page 40.
Dr. Kiran Kumari Gupta- Natural depiction in Hindi poetry, page 14.
Dr. Chintamani, Lokayan, page 39.
Dr. Lata Verma, unpublished research paper- Analysis of the influence of regional elements on medieval Rajasthani painting, 1985, page 80.
Dr. Shyam Bihari Agarwal- History of Indian Painting (Medieval) page 38-39.
Gopinath Sharma- Nathdwara Painting from 7th to 20th Century (Article Indian History Congress Proceedings) pp. 458-564.
Vijay Vargiya Ram Gopal- Kishangarh Ki Chitrakala Navneet Arya 1983 p. 53.
Ram Gopal Vijay Vargiya- Rajasthani Chitrakala page 1.
Dr. Lata Verma, Unpublished Dissertation- Analysis of the Influence of Regional Elements on Medieval Rajasthani Painting, year 1985 p. 104.
Dr. Shyamal Bihari Agarwal- History of Indian Painting, p. 59.
Ramavatar Agarwal- Kala Vilas, p. 108.
Dr. Shyamal Bihari Agarwal- History of Indian Painting, Page 65.